P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-III*November-2014
E: ISSN NO.: 2349 – 980X

वेदों में वाक् तत्त्व का स्वरूप

कौशल किशोर गोठवाल
व्याख्याता,
संस्कृत विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
बून्दी, राजस्थान

सारांश

ज्ञान विज्ञान का ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जो साक्षात्कृतधर्मा भारतीय मनीषियों की दृष्टि से ओझल हो। वेदों में वाक्तत्त्वस्वरूप नामक प्रकृत शोध पत्र में यह चिन्तन प्रस्तुत किया गया है कि उन वैयाकरण ऋषियों ने ऋग्वेद के द्वारा प्रस्तुत की गई उस पहेली को बूझ लिया था जिसमें यह पूछा गया था कि एक वृषभ है जिसके चार सींग हैं, तीन पैर हैं, दो सिर और सात हाथ है। वह तीन स्थानों पर बंधा हुआ शब्द करता है और वह एक महान् देव अमर होता हुआ भी मरणधर्मा मनुष्यों में आविष्ट हुआ है –

1. चत्वारि श्रृड्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति, महादेवो मर्त्यां आ विवेश।। ऋक् 4/58/3

मुख्य शब्द : महाभाष्यकार, वाक्तत्त्वस्वरूप, साक्षात्कृतधर्मा, ब्रह्मणस्यपति।

प्रस्तावना

इस पहेली में वैयाकरण ऋषियों ने आत्मतत्त्व और शब्दतत्त्व के तादात्म्य के रूप में चरम सत्य के दर्शन किये थे। इसमें उन्होंने यह भी देखा था कि वाक्तत्व और आत्मतत्व एक ही अविभाज्य सत्ता है जैसा कि महाभाष्यकार पतञ्जली ने इसका व्याख्यान करते हुए कहा है कि वह महान् पूजनीय देव शब्द हैं जिसके चार सींग अर्थात् नाम, आख्यात्, उपसर्ग एवं निपातभेद से, तीन पाँव है – भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान रूप तीन काल ही तीनों पाँव है। नित्य एवं अनित्य शब्द ही दो सिर हैं, सातों विभक्तियाँ ही सात हाथ हैं, उरस, कण्ठ तथा सिर (मूर्धा) नामक तीन स्थानों में बंधा हुआ वह शब्द करता है यह महान् अमरदेव मरणधर्मा मनुष्यों में आविष्ट है।

ऋग्वेद वाणी के रहस्यमय स्वरूप से परिचित है। ऋचा कहती है कि कोई वाणी के स्वरूप को देखता हुआ भी नहीं देखता, कोई उसे सुनता हुआ भी नहीं सुनता,जबकि यह वाक्तत्त्व किसी की भी पात्रता को समझ कर उसके सम्मुख अपने स्वरूप को खोल देता है –

2. उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः श्रृण्वन्न श्रृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वे विसस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः।। ऋक् 10/71/4

पतञ्जली के अनुसार विद्वान व्याकरण इस विधा में इसीलिए रत रहते है जिससे वे वाग्देवी के परम रूप के दर्शन से स्वयं को कृतकृत्य कर सके –

3. वाङ्नों विवृणुयादात्मानमित्यध्येयं व्याकरणम्। महाभाष्य

वैयाकरण सृष्टि के प्रत्येक विवेचन विश्लेषण एवं परीक्षण को व्याकरण के अन्तर्गत समझते है उन्हें व्याकरण के इस स्वरूप का ज्ञान वेद से प्राप्त होता है। यजुर्वेद के अनुसार प्रजापति ने रूपों को देखकर सत्य और अनृत अर्थात् स्फोट और ध्वनि का व्याकरण – विश्लेषण किया। उन्होंने अनृत में अश्रद्धा तथा सत्य में श्रद्धा की प्रतिष्ठा की –

4. दृष्ट्वां रूपे व्याकरोत सत्यानृते प्रजापतिः।
अश्रद्धामनृते दधाच्छदधाँ सत्ये प्रजापतिः।। यजु 19/77

तैतिरीय संहिता के अनुसार वाक्तत्व प्रारंभ में अव्याकृत अर्थात् व्याकरण के विश्लेषण से रहित था। देवों ने इन्द्र से यह प्रार्थना की" वे इस वाक्तत्व का विवेचन कर दें। इन्द्र के द्वारा उसका विवेचन – विश्लेषण किये जाने के कारण वाक्तत्व को व्याकृता वाक् कहा जाता है –

5. वाग्वै पराच्यव्याकृतावदते देवा इन्द्रमब्रुवत्रिमां नो वाचं व्याकृर्व्विति तामिन्द्रों मध्यतोऽवकम्य व्याकरोत्सादियं व्याकृता वागुधते। (तै. संहिता, 6/4/7)

वाक्यपदीयकार भर्तृहरि ने किसी लुप्त वेदशाखा की एक ऋचा उद्धृत की है जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वाक्तत्व ही विश्वरूप भावों के रूप में प्रादूभूर्त हुआ है। इससे भी सकल अमृत और मर्त्य की उत्पति हुई है। वाक् ही इन सबकी भोक्त्री है। वाक् ही बहुविध अर्थो का कथन करती है। वस्तुतः जो भी कुछ है वह वाक्तत्व से परे या अतिरिक्त कुछ भी नहीं है –

6. वागेव विश्वा भुवनानि जज्ञे वाच इत् सर्वममृतं मर्त्यं च अथेद् वाग

बुभुजे वागुवाच पुरूत्रा वाचो न परं यच्च वाह ।। वाक्यपदीय, 1/112

इसी प्रकार एक अन्य वचन में यह कहा गया है कि वाक् ही शक्ति रूप में निहित अर्थो का आविर्भात करती है। वाक् ही इन अर्थो को जानती है। वाक् ही अर्थो का अभिधान करती है –

7. वागेर्वायं पश्यति वागेवार्थ ब्रवीति वागेवार्थ निहितं सन्तनोति।
वाक्येव विश्वं बहुरूप निबद्धं तदेतदेकं प्रविभज्योपभुड. क्ते।।
(वाक्यपदीय के सम्बन्धसमुद्देश्य का समीक्षा अध्ययन)

वाक्तत्व की महिमा का वर्णन करते हुए ऋग्वेद कहता है कि यह वाक्तत्व सहस्त्र प्रकार से व्याप्त है। जितनी और जहाँ तक द्युलोक और पृथ्वी की प्रतिष्ठा है उतनी और वहाँ तक वाक्तत्व प्रतिष्ठित है अर्थात् जितना और जहाँ तक ब्रह्मतत्त्व व्याप्त है उतना और वहाँ तक वाक्तत्व भी व्याप्त है –

8. स्हस्त्रधा पञ्चदशन्युक्ता यावद् धावापृथिवीतावदित् तत् स्हस्त्रधा महिमानः सहस्त्रं यावद् ब्रह्म विष्ठितं तावती वाक्।। ऋक् 10/114/8

ऋग्वेद अचेतनों में भी वाक्तत्त्व की सत्ता स्वीकार करता है। उसके अनुसार अचेतन भी वाक्तत्त्व का उपयोग करते है। यह वाक्तत्त्व दिव्य तत्त्वों में ज्योति का आधायक है, वह आनन्दरूप होकर स्थित है –

यद् वागवदन्त्यविचेतयानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा।

ऋग्वेद के अनुसार देवों ने दिव्य वाक्तत्व को उत्पन्न किया है उसे सभी प्रकार के पशु बोलते है। वह दिव्य वाक्तत्त्व ऐश्वर्य एवं शक्ति दोनों प्रदान करता हैं।

(वेदमयी दिव्या वाक् नित्य है, अतः आदि और अन्त से रहित भी है, चूँकि संसार की सभी प्रक्रियाएं इसी पर आश्रित हैं, अतः ब्रह्माजी ने सबसे पहले वेद – वाड्.मय के रूप में अवरों को अभिव्यक्त किया) इस स्मृति – वाक्य से वेद की वाक् – स्वरूपता तथा नित्यता प्रकट की है। यही कारण है कि वेदों का स्वतः प्रामाण्य प्रथित है। "वाग् – विवृताद्य वेदा " : इस श्रुति वाक्य से एवं उक्त प्रतिपादनानुसार वागात्मक वेद को आचार्य भर्तृहरि ने सम्पूर्ण विश्व का कल्पादि में निर्मापक कहा है –

9. "शब्दस्य परिणामोऽयमित्याम्नाय विदो विदुः।
छन्दोभ्य एव प्रथममेतद् विश्वं व्यवर्तित।।

इस प्रकार शब्दामयी (वेदमयी) वाग् देवी इस चराचर जगत् की मूलप्रकृति मानी गई है। इसीलिए शब्द को ब्रह्म कहा गया है तथा शब्दब्रह्मसे परब्रह्म का अधिगम माना गया है –

10. "द्वे ब्रह्माणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत्।
शाब्दे ब्रह्माणि निष्णात : परं ब्रह्माधिगच्छति।।

वस्तुतः इस नित्य शब्द की उपासना से व्यक्ति न केवल इसी लोक में, अपितु अपर लोक में भी सुफल को प्राप्त करता है, किन्तु वह शब्द केवल श्रवणेन्द्रिय का विषय नहीं बल्कि सम्यग् अर्थज्ञान पूर्वक प्रयुक्त किया जाकर उपासना के द्वारा लब्ध होने वाला हैं

11. "एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुष्ठुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके कामधुग् भवति।

इस प्रकार का अपूर्व – महिमामय यह शब्द सम्पूर्ण चराचर जगत् को व्याप्त किये हुए है, संसार का ऐसा कोई पदार्थ या पदार्थ – ज्ञान नहीं है जो शब्द के विना आभासित हो रहा हो। शब्द और अर्थज्ञान परस्पर इस प्रकार से अनुस्यूत हैं कि पांसूदकवत् पार्थक्य कर पाना सम्भव नहीं है –

12. "न सोऽस्ति प्रत्यत्यो लोके यः शब्दानुगमाद् ऋते।
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते।।" (वा.प.)

चूंकि शब्द के बिना अर्थ नहीं है, अर्थ के बिना ज्ञान नहीं और ज्ञान सविषयक होता है। निर्विषयक नहीं, अत : यह सम्पूर्ण जगत् मूलतः वागात्मक शब्द से इतना अधिक जुड़ा हुआ है कि सूर्य – चन्द्र तारादि विशिष्ट प्रकाशक तत्वों की विद्यमानता में भी शब्द तत्व के अभाव में अन्धकार में निमग्न हो जाता, अत : महाकवि दण्डी ने तर्क – संगत ही कहा है।

13. "इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।।

ऋग्वेद का कथन है कि सृष्टि में एक सत तत्व है जिसे विद्वानों ने अनेक नामों से अभिहित किया है। यथा इन्द्र वरूण अग्नि दिव्य सुपर्ण यम मातरिश्वा आदि।

14. इन्द्रं मित्रं वरूणमग्निमाहुरयो दिव्यः स सुपर्णो गरूत्मान्
एक सद् विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं
मातरिश्वानमाहुः।। ऋक् 1/164/46

यास्क ने निरूक्त में अक्षर, ब्रह्मणस्यपति आदि नामों से संबोधित करते हुए उसके वाक्तत्व को आत्मा ब्रह्म आदि कहा है तथा उसका स्वस्थ निर्धारण करते हुए यह स्पष्ट किया है कि वह साक्षीमात्र है वह प्रज्ञा के द्वारा सभी को ज्ञान रूप होने के कारण बंधनरहित कराता है।

15. "अक्षरं ब्रह्मणस्यपतिम्। प्रज्ञया कर्म कारयति।
आत्मा ब्रह्मेति साक्षीमात्रों व्यवतिष्ठतेऽबन्धे ज्ञानकृतः।
निरूक्त, 13/23

वैयाकरण जिसे अक्षरतत्त्व शब्दतत्त्व के नाम से अभिहित करते है उसे वेद ने मेधातत्त्व कहा है तथा यह भी कहा है कि समस्त देव एवं पितृगण उस मेधातत्त्व की ही उपासना करते हैं –

16. यां मेधा देवगणाः पितरश्चोपासते तथा मामद्य मेधयाऽने मेधाविनं कुरू।। यजु दृ 32/14

यजुर्वेद के पुरूषसूक्त में यह कहा गया है कि परमपुरूष ही वर्तमान, भूत और भविष्यत् है।

वही अमृततत्त्व अर्थात अक्षरतत्त्व का स्वामी है।

ऋग्वेद में वाक्तत्व की विस्तृत व्याख्या करते हुए कहा गया है।

17. चत्वारि वाक्यपरिमिता पदानि,
तानि विदुब्रह्मिणा ये मनीषिणः।
गुहां त्रीणी निहिता नेङ्गयन्तितुरीयं
वाचो मनुष्याः वदन्ति।।
वाक्तत्व के चार भेद बताये गये है
परा, पश्यन्ति, मध्यमावैखरी

इन भेदो के ज्ञाता विद्वज्जन ही जानते है।

परा पश्यन्ति मध्यमा इन तीन भेदों के गुहा में निहत होने के कारण केवल तुरीय वाक का प्रयोग ही मनुष्यों के द्वारा व्यवहार में किया जाता है।

तुरीय वाग् वैखरी के भी चार वैज्ञानिक विभाजन किये गये है –

18. **"तदेतत् तुरीयं वाचो निरूक्तं मनुष्याः वदन्ति।**
अथैतत् तुरीयं वाचोऽनिरूक्तं यत् पशवोऽदन्ति।
अथैतत् तुरीयं वाचोऽनिरूक्तं यद्वयांसि वदन्ति।
अथैतत् तुरीयं वाचोऽनिरूक्तं यदिदं क्षुद्रं सरीसृपं वदन्ति।"

इस प्रकार वैखरी का निरूक्तांश मनुष्य बोलतें है, अवशिष्ट तीन अनिरूक्तांश क्रमशः पशु– पक्षी और सरीसृप बोलते है। इनमें से भी मनुष्य–प्रयुक्त निरूक्तं वैखरी वाक् के भी चार विभाजन हैं –

1. प्राण
2. स्वर
3. वर्ण
4. ध्वनि

निम्नांकित पाणिनीय शिक्षोक्ति इसमें प्रमापिका है –

19. "आत्मा बुद्ध्या समेत्यार्थान् मनो युंक्ते विवक्षया।
मनः कायाग्निमाहत्य सः प्रेरयति मारूतम्।
मारूतस्तूरसि चरन् मन्द्रं जनयति स्वरम्।
सोदीर्णो मूर्ध्न्यभिहतो वक्त्रमापद्य मारूतः।
वर्णान् जनयते तेषां विभागः पञ्चधा स्मृतः।।"

रूपान्तर से भी निरूक्ता वैखरी के चार विभाजन हैं –

1. वर्ण
2. अक्षर
3. पद
4. वाक्य।

इनमें वाक्य ही अर्थावबोधक है। अत : इसी को मनुष्य प्रयोग में लाते है, इसीलिए न्यायभाष्यकार ने कहा है" पदसमूहो वाक्यमर्थ–समाप्तौ समर्थम्।

उपसंहार

यह सम्पूर्ण संसार वाङ्मय ही है, वाग्देवी का ही यह वैभव है। अत : उसके स्वरूप को समझने के लिए अधिकाधिक मनन की आवश्यकता है।

यह वाक् विना मन और प्राण के नहीं रहती है, अतः इन तीनों का समष्टि रूप ही आत्मा है –

20. "स वा अयमात्मा वाङ्मयो मनोमयः प्राणमयः।

"वाक्" शब्द की अन्वर्थकता भी उक्त संकेताभिप्रायक ही है – **उकारः प्राणमाह, अकारश्च मनः, उश्च अश्च इति वौ, तौ अञ्चतीति वाक् अर्थात् तद्गर्भिता (मनः प्राणगर्भिता) सहचरी वा भवतीति वाक्।** प्रत्येक पदार्थ की आत्मा वाक् में प्रलीन है, अत : आत्मा वाङ्मय है। कोई भी स्थान इन्द्र के विना पवित्र या क्रियाशील नहीं है। वाक् ही इन्द्र है, अत : वाक् के विना कोई भी वस्तु क्रियाशील या पवित्र नहीं है।

21. "वाचश्चेन्द्रेष्वेकत्वादात्मायमिन्द्र इत्युच्यते।
तथा च कोषीतकि श्रुतिरप्याह – तत् सर्व आत्मा वाचमप्येति, वाङ्मयो भवति।
तदेतद् ऋचाभ्युदितम, नेन्द्राद् ऋते पवते धाम किञ्चनेति।
वाग् वा इन्द्रः। न हि ऋते वाचः पवते धाम किञ्चन।"

वेदविज्ञान के आलोक में चिन्तन करने पर यह बात ही स्पष्ट हो जाती है कि शब्द और अर्थ दोनों का प्रादुर्भाव नित्य वाक्तत्व से हुआ है। यह वाक्तत्त्व ही विविध दर्शन निकायों में शब्दतत्व के नाम से जाना जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- ऋग्वेद 4/58/3
2- ऋग्वेद 10/71/4
3- पतञ्जलि महाभाष्य
4- यजुर्वेद 19/77
5- तैत्तरीय संहिता 6/4/7
6- वाक्यपदीय भर्तृहरि 1/112
7- वाक्यपदीय के संबंध समुद्देश्य का समीक्षा अध्ययन
8- ऋग्वेद 10/114/8
9- भर्तृहरि वाक्यपदीय 1/2
10- महाभारत शान्तिपर्व 1232/302
11- पतञ्जलि महाभाष्य पा.सू. 6/1/84
12- भर्तृहरि वाक्यपदीय 9/1
13- दण्डी काव्यादर्श
14- ऋग्वेद 1/164/46
15- निरूक्त 13/23
16- यजुर्वेद 32/14
17- ऋग्वेद 1/164/45
18- वाजसनेय श्रुतिवाक्य पृथ्यस्वस्ति पृ.सं. 33
19- पणिनीय शिक्षा
20- शतपथ ब्राह्मण
21- मधुसुदन ओझा महर्षि कुलवैभव पूर्वाध पृ.सं. 254